30

प्रारंभिक राज्य

प्राचीन भारत के इतिहास में हमें सिंधु घाटी की शहरी सभ्यता से लेकर गुप्त वंश के क्लासिक युग तक समाज के अनेक रूप मिलते हैं। इस अवधि के दौरान हमें केंद्रीक त एवं विकेंद्रीक त सरकारों का स्वरूप मिलता है, जिनमें से कुछ अपनी राजनीतिक संरचना और शासन में अत्यधिक संगठित थीं, तो अन्य अपनी आंतरिक समस्याओं और शक्ति के विभाजन के कारण कमजोर थीं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आपः

- प्राचीन भारत में राज्य–प्रणाली का विकास कैसे हुआ, इसकी व्याख्या कर सकेंगे;
- विभिन्न प्रकार के राज्यों में अंतर कर सकेंगे;
- यह समझ सकेंगे कि अत्यधिक शक्तिशाली राज्यों का विकास कैसे हुआ?

30.1 प ष्ठभूमि

प्रारंभ में मानव समाज का मानना था कि सभी मनुष्य समान हैं और सबको समान अधिकार होने चाहिए, क्योंकि मुख्यतया यह एक जनजातीय समाज था। राज्य के विचार का आविर्भाव संसाधनों पर नियंत्रण के लिए हुए युद्धों का परिणाम था और एक विशिष्ट अर्थव्यवस्था या समाज का विकास प थक स्तरों पर हुआ। वर्ग–आधारित समाज का विकास राज्य–प्रणाली में परिवर्तन लाने के लिए अनिवार्य था। जनसंख्या में व द्धि और ग हस्थ जीवन का विकास इसके अन्य कारक थे।

30.2 राज्यतंत्र की विचार धारा का विकास

पुरातत्वीय प्रमाणों ने हड़प्पा में एक सुद ढ़ केंद्रीक त सत्ता को जन्म दिया। वैदिक कालीन राजतंत्रों में कुल का मुखिया राजा बनता था, जिसने धीरे–धीरे ईश्वर के बराबर हैसियत से मिल गई। बौद्ध और जैन मतों ने ईश्वरत्व की विचारधारा को नकारा तथा उसके बजाय यह माना कि मूल प्राक तिक अवस्था में सभी आवश्यकताएं सहज ही पूरी हो जाती थीं, परन्तु शनैः शनैः पतन प्रारंभ हो गया एवं इच्छाओं का विस्तार करते हुए मनुष्य शैतान

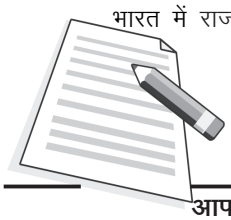

आपकी टिप्पणियाँ

बन गया, जिससे निजी सम्पत्ति और परिवार के भाव मन में आने लगे और अंततः मनुष्य अनैतिक व्यवहार करने लगा। अराजकता की इस स्थिति में लोग एकत्र हुए और अपने में से किसी एक को चुनने का निर्णय लिया। महासम्मत यानी 'महा चयन' जिसे वे कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए अधिकार प्रदान करेंगे। इस प्रकार धीरे–धीरे राज्य संबंधी संस्था अस्तित्व में आई। परवर्ती सिद्धांतों ने शासक और प्रजा के बीच एक करार का स्वरूप बनाए रखा। ब्राह्मण स्रोतों का मानना था कि देवता ही राजा को नियुक्त करते थे और राजा और प्रजा के बीच देनदारियों का अनुबंध संपन्न हुआ। साथ ही मत्स्यन्याय का सिद्धांत भी प्रचलित था, जो बताता है कि अव्यवस्था के वक्त जब कोई शासक नहीं होता तब शक्तिशाली कमजोर को खा जाता है वैसे ही जैसे कि सूखे के समय बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती हैं। इस प्रकार राजा की परम आवश्यकता समझी गई। राज्य का अस्तित्व मुख्यतया दो घटकों पर निर्भर था 'दंड (प्राधिकारी) और धर्म (उसकी सामाजिक व्यवस्था अर्थात्–जाति–ढांचे के संरक्षण के संदर्भ में)। *अर्थशास्त्र* में राज्य के सात अंगों (सप्तांग) का उल्लेख हैं–राजा, प्रशासन, क्षेत्र, राजधानी, राजकोष, प्रबल प्राधिकारी एवं सहयोगी। तथापि, धीरे–धीरे राज्य की राजनीतिक धारणा कमजोर पड़ने लगी, मुख्यतः राजनीतिक परंपरा को विनाश के कारण तथा राजतंत्रीय प्रणाली, के कारण जिसमें राजा के प्रति कि निष्ठा रहती थीं। मौर्य साम्राज्य के आविर्भाव से राजतंत्र के राजनीतिक विचार को मजबूती मिली। सामाजिक व्यवस्था में द्वितीय घटक धर्म था, जो राज्य की अस्पष्ट होती विचार–धारा की तुलना में पहले से कहीं अधिक निष्ठा की मांग करता था। राजा का कर्त्तव्य था धर्म की रक्षा करना तथा जब तक सामाजिक व्यवस्था अंक्षुण्ण रहेगी, अराजकता हावी नहीं होंगी। भारतीय सभ्यता की मूल पहलू रही सामाजिक व्यवस्था के प्रति निष्ठा कई शताब्दियों से मुख्य सामाजिक संस्थाओं की प्रभावशाली निरंतरता के लिए उत्तरदायी रही है। तथापि इसने राज्य के राजनीतिक विचार के प्रति निष्ठा को बदल भी दिया, जिसके कारण अनेक बार और अधिक साम्राज्य अस्तित्व में आ गए होते तथा अधिक राजनीतिक चेतना आ जाती। मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद साम्राज्य के पुनः विकसित होने में कई शताब्दियाँ लगीं।

30.3 सिंधु और वैदिक राजनीतिक या सरकारी संगठनः राज्य पूर्व से लेकर राज्य तक

सिंधु घाटी की शहरी सभ्यता से उस क्षेत्र में प्रारंभ हुई जटिल योजना तथा उस काल के मानक के अनुसार लोगों के रहन–सहन का पता चलता है। पुरातत्वीय प्रमाण के बढ़ते निकाय के बावजूद, सिंधु 'राज्य' की सामाजिक और राजनीतिक संरचनाएं अटकलबाजी की वस्तुएं बनी हुई हैं। संपूर्ण सिंधु क्षेत्र में वजन और माप की महत्त्वपूर्ण समरूपता तथा विशाल अन्न–भंडारों के रूप में ऐसे संभावित नागरिक कार्यों का विकास विशाल क्षेत्र पर राजनीतिक तथा प्रशासनिक नियंत्रण की सुद ढ़ अवस्था के संकेत देते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि आर्य भारत में लगभग 1500 ई. पू. प्रसिद्ध खैबर दर्रे से आए थे तथा इससे भारतीय इतिहास के वैदिक काल में एक और सभ्यता का विकास हुआ था। आर्य कई कबीलों में बंट गए थे, जो उत्तर–पश्चिमी भारत के विभिन्न स्थानों में बसे थे। कबीले के मुखिया का पद धीरे–धीरे वंशानुगत हो गया था, यद्यपि मुखिया अक्सर समिति अथवा संपूर्ण समुदाय की सलाह से कार्य करता था। कबीले का प्रमुख राजा की पदवी

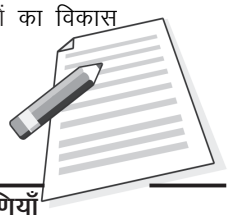

धारण करते तथा युद्ध–नेताओं की तुलना में अधिक महत्त्व रखते थे तथा उनका मुख्य कार्य अपने लोगों का संरक्षण करना था। राजा की शक्ति पुजारियों के उच्चतर प्राधिकार के बराबर निर्धारित की गई थी। वैदिक राजतंत्र आर्य लोगों के आस–पास की स्थितियों का स्वाभाविक परिणाम था। राजा युद्ध में आक्रमण और बचाव की कार्रवाई करने के लिए लोगों का नेत त्व करता था। उसे 'लोगों का संरक्षक' कहा जाता था। ऋग्वेद का एक अध्ययन दर्शाता है कि राजा आदिकालीन कबीले का ही नेत त्व करने वाला नहीं रह गया था बल्कि उसने लोगों में अपनी जगह प्राप्त कर ली थी। लोगों का संरक्षण करना राजा का पवित्र कार्य था। बदले में वह भेंट के रूप में अपनी प्रजा से वफादारी की अपेक्षा करता था और उसे प्राप्त करता था।

आर्य कबीलों के लोग मजबूत राजनीतिक आधार के अभाव में और अपनी जाति–प्रथा की अस्थिर प्रक ति के चलते अनार्य लोगों के विरुद्ध संगठित नहीं हो सके। साम्राज्य का यह कमजोर लक्षण कठोर जाति–प्रथा से आया जिसने लोगों को बांटा तथा उनमें अस्थिरता की भावनाएं पैदा कीं। इन्हीं कुछ कारणों से वैदिक साम्राज्य सिंधु घाटी की सभ्यता की तुलना में बहुत कम संगठित था।

शुरुआत के तौर पर, ही वैदिक काल में *'जन'* जैसी राजनैतिक इकाइयाँ मौजूद थीं, जिन्होंने बाद में जनपद–महाजनपद का रूप धारण कर लिया। जन वह क्षेत्र था जहाँ कबीले के लोग रहते थे। इन कबीलों का नाम उनके लोकप्रिय मुखिया के नाम पर पड़ा था। बाद में क्षेत्र का विस्तार होने से राजनीतिक संगठन के स्वरूप में परिवर्तन आया।

वैदिक काल के बाद सरकार की एक नई प्रणाली के रूप में सरकार की शासन कला का विकास हुआ। कबीलाई राज्य की पूर्ण एकता और श्रेष्ठ योद्धाओं की राजनैतिक शक्ति से राजत्व की नई शैली विकसित हुई।

इसका लक्ष्य अधिक पेशेवर सेनाओं का स जन करना तथा राजा पर और अधिक निर्भरता बढ़ाना था। इस शासनकला का उद्देश्य प्राक तिक संसाधन वाले क्षेत्रों को लूटना तथा कर देने वाले किसानों का शोषण करना था न कि कबीलाई क्षेत्रों का विस्तार करना था।

30.4 महाजनपद

मौर्य साम्राज्य की स्थापना से सदियों पहले की अवधि के दौरान कौशल और मगध राज्यों का विकास हुआ जो कि अपेक्षाक त तीव्र सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन का काल था। इस अवधि में हम कबीलाई राज्यों को छोटे–छोटे टुकड़ों में बिखरते, जाति–मॉडल का विकास होते तथा चावल उपजाने वाली पूर्वी गंगा घाटी की ओर कूच करते हुए देखते हैं। पुराने सामाजिक संबंधों के विघटन के समय में सामाजिक और राजनीतिक संबंधों में नई रीतियों की स्थापना के दौरान हम महापरिवर्तन पर आधारित विचारधारा विकसित होते देखते हैं। बौद्ध और जैनों का आविर्भाव इस परिवर्तन का परिणाम था। 1500 से 800 ई. पू. के बीच गंगा और यमुना के मैदानों में घने जंगलों की सफाई करते हुए और 'कबीलाई' बस्तियों की स्थापना करते हुए आर्यों ने पंजाब क्षेत्र की अपनी मूल बस्तियों से धीरे–धीरे पूर्व की ओर बढ़ना शुरू किया। 500 ई. पूं. के आसपास तक उत्तरी भारत के ज्यादातर भागों में लोग बस गए थे तथा वहां खेती होने

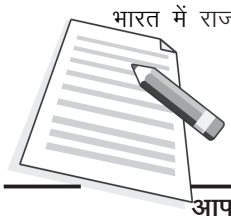

आपकी टिप्पणियाँ

लगी थी। बैल से चलने वाले हलों सहित लोहे के औजारों के उपयोग से बढ़ते ज्ञान की बदौलत स्वैच्छिक तथा बेगार श्रमिक उपलब्ध कराने वाली जनसंख्या व द्धि के चलते, नदी पर आधारित होने और अंतर्देशीय व्यापार के फलने–फूलने से गंगा के तट पर बसे कई नगर व्यापार, संस्क ति और विलासी जीवन के केन्द्र बन गए थे। बढ़ती जनसंख्या और अधिक उत्पादन ने स्वतंत्र राज्यों के विकास के लिए आधार तैयार किए जिनकी अनिश्चित सीमाएँ थीं तथा जिन्हें लेकर अक्सर लड़ाइयां होती रहती थीं। कबीले के मुखिया के नेत त्व वाली मूल प्रशासनिक प्रणाली अनेक प्रादेशिक गणराज्यों अथवा वंशानुगत राज्यों में रूपांतरित की गई। जिसने सुदूर पूर्व और दक्षिण में नर्मदा नदी से आगे बस्ती और क षि क्षेत्रों का विस्तार करने के लिए उपयुक्त राजस्व वसूली तथा श्रमिकों से जबरन काम करने के तरीके ईजाद किए। इन विकसित राज्यों में अधिकारियों द्वारा राजस्व एकत्रित किया गया, सेनाएं रखी गईं और नए शहरों व राजमार्गों का निर्माण किया गया। 600 ई. पू. तक आधुनिक अफगानिस्तान से बंगला देश तक उत्तर भारत के मैदानों में ऐसे सोलह शक्तिशाली राज्य बन गए थे। अपने सिंहासन के लिए राजा के अधिकार को चाहे वह कैसे भी मिला हो, बलिदानयुक्त अनुष्ठानों और पुरोहितों द्वारा, कानूनसम्मत बनाया गया। ग्रंथों में हमें सोलह महाजनपदों के विकास के संदर्भ मिलते हैं। उनमें से मगध कौसल काशी, अवन्ति, वैशाली, लिच्छवि आदि महत्त्वपूर्ण थे। महाजनपद दो प्रकार के थे, जिनका नीचे उल्लेख किया गया है:

(1) राजतंत्रीय महाजनपद

पहले प्रकार का राजतंत्र वह था जिसका राजा अथवा मुखिया उस क्षेत्र का प्रधान होता था। इस प्रकार के राजतंत्र में वैदिक अनुष्ठानों और ब्राह्मणों को महत्त्व दिया जाता था। इन क्षेत्रों में राजा वैदिक बलियाँ देते थे। उदाहरणार्थ, कोसल राजतंत्रीय महाजनपद की श्रेणी में आता था। कोसल का राजा प्रसेनजित अनेक बलियाँ देने के लिए प्रसिद्ध था।

(2) गणराज्य महाजनपद

महाजनपदों का दूसरा प्रकार गणराज्य अथवा कुलीनतंत्रीय था, जो राजतंत्रीय राज्यों से भिन्न था। इस श्रेणी में राजा का चयन 'राजा' कहे जाने वाले लोगों के समूह में से किया जाता था। असेम्बलियों का भी उल्लेख मिलता है, जिन्हें 'सभा' कहा जाता था। इनमें सदस्य विशेष मामलों पर चर्चा करते थे और बाद में उस पर मतदान होता था। ऐसी एक सभा में 7707 राजाओं की मौजूदगी का उल्लेख मिलता है जो राजन्यास की श्रेणी का प्रतिनिधित्व करते थे, जिनकी अपनी भूमि होती थी जिन पर दासों, कर्मकारों अथवा मजदूरों द्वारा खेती की जाती थी। राजा अपनी युद्ध करने की योग्यता से जाने जाते थे। इस श्रेणी में वैदिक बलियों को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था और ब्राह्मणों को क्षेत्रियों के बाद दूसरे क्रम का सामाजिक दर्जा दिया गया था। इन महाजनपदों के अध्ययन का मुख्य स्रोत बौद्ध ग्रंथ हैं।

(3) राजतंत्रीय महाजनपदों और गणराज्य-महाजनपदों में संघर्ष

हिमालय के बीच निचले भाग के निकट व जि राज्य–संघ (अनेक राज्यों का संघ) शक्तिशाली कुलीन तंत्र था जिसने कुछ राजतंत्रीय राज्यों के प्रभुत्व को चुनौती दी थी मगध और लिच्छवि जैसे राजतंत्रीय राज्य अत्यधिक कठिनाई में थे क्योंकि वे अपने क्षेत्रों का विस्तार करने में असमर्थ थे। महाजनपदों में शक्ति और प्रभुत्व के लिए संघर्ष बढ़ा।

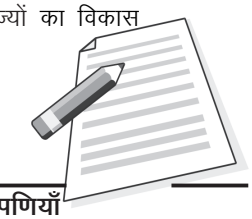

मगध का राजा अजातशत्रु महत्त्वाकांक्षी था। उसने पड़ोसी राज्यों पर विजय हासिल करने का निर्णय लिया। युद्ध और वैवाहिक संबंधों की बदौलत वह कोसल और काशी पर विजय पा सका।

पाठगत प्रश्न 30.1

निम्नलिखित वाक्यों को सही करके पुनः लिखेः

1. प्रारंभ में मानव–समाज मुख्यतया कबीलाई समाज नहीं था।

2. अशोक महान के आविर्भाव से राजतंत्र की राजनीतिक धारणा को मजबूती मिली।

3. आर्य कबीले मजबूत राजनीतिक आधार के अभाव में आर्येतर लोगों के विरूद्ध संगठित हो गए।

4. एक सभा में 7077 राजा थे, जो राज्यों की श्रेणी का प्रतिनिधित्व करते थे।

30.5 मगध और मौर्यों का उदय

इस प्रकार राजतंत्रीय राज्यों में मगध एक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभरा। तथापि उसे लिच्छवियों से अनेक वर्षों तक युद्ध करना पड़ा। अजातशत्रु ने व जि संघ के कबीलों में मतभेद पैदा करने के लिए अपने मंत्री को भेजा। इस प्रयास के कारण अंततोगत्वा अजातशत्रु को लिच्छवि के विरुद्ध सफलता मिली और वह मगध साम्राज्य का हिस्सा बन गया। उत्तरी व्यापार–मार्ग को नियंत्रित करने वाला यह क्षेत्र *उत्तरापथ* कहलाता था, जबकि *दक्षिणापथ* कहलाने वाला दक्षिणी मार्ग मगध के नियंत्रण में था। इन जीतों के कारण मगध आर्थिक संसाधनों, जैसे ऊपजाऊ नदी घाटियां और लौह अयस्क की खानों की व्यवस्था करने में समर्थ हो पाया। इससे विभिन्न वस्तुओं का उत्पादन इसके लिए कच्चे माल की आवश्यक आपूर्ति होती थी। परिणामस्वरूप हमें इससे मगध में राज्य का निर्माण प्रारंभ होने के संकेत मिलते हैं। मौर्य वंश द्वारा शासित मौर्य साम्राज्य प्राचीन भारत का विशाल एवं अत्यधिक शक्तिशाली राजनीतिक एवं सैन्य साम्राज्य था। आधुनिक बिहार एवं बंगाल के सिंधु–गंगा मैदानों में मगध राज्य उत्पन्न हुआ था। इसकी राजधानी पाटलिपुत्र (आधुनिक पटना के निकट) थी। इस साम्राज्य की स्थापना चन्द्रगुप्त मौर्य ने 322 ई. पू. में की थी, जिसने नंद वंश को पराजित किया और मध्य तथा पश्चिमी भारत में अपनी शक्ति का विस्तार करना प्रारंभ किया। बिन्दुसार द्वारा मध्य तथा दक्षिणी प्रदेशों में इस साम्राज्य का विस्तार किया गया था, परन्तु इसने कलिंग के निकट अज्ञात कबीले के छोटे से हिस्से और जंगल से आच्छादित प्रदेशों को अलग रखा।

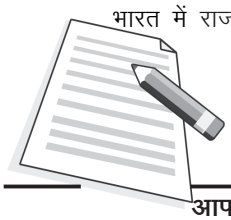

आपकी टिप्पणियाँ

कलिंग के महासंग्राम में विजय के बाद अशोक महान ने साम्राज्य के सैन्य विस्तार को समाप्त कर दिया, अतः मौर्य सम्राट के प्रभुत्व को स्वीकार करते हुए दक्षिण भारत में पांड्य और चेरों के राज्यों ने अपनी स्वतंत्रता को बनाए रखा। अंग्रेजों के भारतीय उपमहाद्वीप में पहुंचने तक मौर्य साम्राज्य ही महान साम्राज्य था। अशोक के शासन–काल की समाप्ति के पन्द्रह वर्ष बाद इसका पतन प्रारंभ हो गया, और मगध में शुंग वंश की नींव पड़ने के साथ ही 185 ई. पू. में इसका अंत हो गया।

30.6 मौर्य कालीन राज्य

चन्द्रगुप्त के मंत्री कौटिल्य चाणक्य ने अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, विदेश नीति, प्रशासन, सेना, कला, युद्ध और धर्म पर महान शोध–प्रबंध 'अर्थशास्त्र' लिखा। पूर्व में इससे पहले ग्रंथ नहीं रचा गया था। पुरातत्त्वीय रूप से दक्षिण एशिया में मौर्य कालीन शासन की अवधि उत्तर क ष्ण म दभांड युग में आती है। अर्थशास्त्र और अशोक के शासनादेश मौर्य–काल के लिखित अभिलेखों के मुख्य स्रोत हैं। सारनाथ स्थित अशोक के सिंह–शीर्ष भारत का प्रतीक है।

मौर्य साम्राज्य में अनेकों प्रकार के राजनीतिक संगठन और पारिस्थितिकी क्षेत्र सम्मिलित थे, उनमें वनवासी, खानाबदोश, मुखिया तंत्र और कुलीन तंत्र जैसे गण–संघ अर्थात मुखियाओं के संघ सम्मिलित थे। उनमें प्रशासनिक ढांचों वाले छोटे–छोटे राज्य सम्मिलित थे, जो अनिवार्यतः मगध के प्रशासनिक ढाँचों जैसे नहीं थे। साम्राज्य के अलग–अलग भागों, जैसे महानगरों और सीमांत प्रदेशों का प्रशासन अलग–अलग ढंग से चलाया जाता था। इस प्रकार संपूर्ण मौर्य कालीन साम्राज्य में प्रशासन की कोई समान विधि मौजूद नहीं थी। एक ओर जहां केन्द्र और महानगरों में राज्य द्वारा सीधे तौर पर प्रशासन चलाया जाता था, वहीं सीमांत प्रदेशों को अधिक स्वायत्तता दी गई थी, क्योंकि इन क्षेत्रों से कर और उपहार एकत्र करने को अधिक महत्त्व दिया गया था। प्रशासनिक तंत्र में अन्य जाति के लोगों में से भर्ती किए गए उच्च अधिकारी सम्मिलित होते थे, जिन्हें अच्छा वेतन मिलता था। भर्ती करने की कोई केन्द्रीय विधि नहीं थी तथा ऐसा प्रतीत होता है कि स्थानीय लोगों को राज्य व महानगरों से दूर के क्षेत्रों में नियुक्त किया जाता था।

अशोक के शासन–काल के दौरान मौर्य साम्राज्य को औपचारिक रूप से पांच भागों में गठित किया गया था। मगध और कुछ निकटवर्ती महाजनपद सीधे प्रशासन के अधीन थे। ग्रीस के दूत, मैगेस्थनीज की रिपोर्टों और अर्थशास्त्र कें केन्द्रीय भाग में अपेक्षाक त केन्द्रीक त प्रशासन के प्रमाण मिलते हैं।

30.7 मौर्यकालीन नौकरशाही

यह साम्राज्य चार प्रांतों में बंटा था जिसकी शाही राजधानी पाटलिपुत्र में थी। अशोक के शासनादेशों के अनुसार चारों प्रांतीय राजधानियों के नाम हैं– तोसाली (पूर्व में), उज्जैन (पश्चिम में), सुवर्णगिरि (दक्षिण में) और तक्षशिला (उत्तर में)। प्रांतीय प्रशासन का प्रधान *कुमार* (शाही राजकुमार) होता था जो राजा के प्रतिनिधि के रूप में इन प्रांतों पर शासन करता था। कुमार को महामात्य और मंत्रिपरिषद् द्वारा सहायता प्रदान की जाती थी। इस संगठनात्मक ढांचे में शाही स्तर पर सम्राट और उसकी मंत्रिपरिषद होती थी। नौकरशाही

की आवश्यकता जीते हुए क्षेत्रों का समान रूप से पुनर्गठन करने के लिए नहीं अपितु राजस्व का प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए पड़ती थी। साम्राज्य के उत्कर्ष काल में मुख्यतया राजस्व–प्रशासन से संबंधित अधिकारियों के समूह का उल्लेख किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि इनकी नियुक्ति केन्द्रीक त रूप से की जाती थी और उन्हें अपने क्षेत्राधिकार वाले क्षेत्रों का भ्रमण करना पड़ता था तथा प्रजा की खुशहाली के बारे में पता लगाना पड़ता था। सिंचाई अत्यधिक विकेन्द्रीक त थी और अक्सर लघुस्तरीय प्राणालियों में बँटी थी। जिसमें नदियों, पोखरों, कुओं, झरनों और क त्रिम तालाबों से जल लिया जाता था, जिन्हें कुंड कहा जाता था। स्थानीय संसाधनों से अधिक विस्त त जलाशयों और नदी तटों का निर्माण किया गया तथापि साम्राज्य नई निर्मित भूमियों के सिंचाई कार्यों में सहायता प्रदान करता था। प्रमाण से पता चलता है कि सिंचाई–कार्यों को स्थानीय रूप से नियंत्रित किया जाता था।

ऐसा प्रतीत होता है कि मौर्यों की व्यापार से राजस्व प्राप्त करने में रुचि थी। लेकिन उन्होंने व्यापार को विनियमित करने में सक्रिय भूमिका नहीं निभाई थी। यह इस तथ्य से इंगित होता है कि वे कोई विशेष किस्म की धात्विक मुद्रा जारी करते दिखाई नहीं देते। उस दौरान पाए गए साधारण पंच–मार्क के सिक्के शिल्पी संघों अथता स्थानीय निकायों द्वारा जारी किए हो सकते हैं। राज्य ने विशिष्ट व्यापारियों और संघों पर नियंत्रण बनाए रखने, उनकी पहचान, उनके माल और उनके लाभ की जांच करने का प्रयास किया था। उत्पादन के स्थान पर वस्तुओं को बेचने की अनुमति नहीं थी, संभवत : इसलिए कि राजस्व एकत्र करने वाले अधिकारियों की बाजारों में बिक्री तक अधिक पहुंच हो जाती थी। राज्य कच्चे माल से उपयोगी वस्तुओं के उत्पादन में विभिन्न बिंदुओं पर अनेक कर एकत्रित करता था। विशेष अधिकारियों की नियुक्ति की गई थी ताकि मानदंडों को सुनिश्चित किया जा सके और धोखेबाजी रोकी जा सके तथा हथियार, गोला बारूद, धातु एवं हीरों जैसी उन मदों के व्यापार पर प्रतिबंध लगाया जा सके, जिन पर राज्य का एकाधिकार होता था। अतः उपयोगी वस्तु का उत्पादन एक स्वतंत्र उपक्रम था जो बाजार के अनुकूल बन गया था तथा व्यापार राज्य के राजस्व का मुख्य संसाधन था।

इतिहासकारों का अनुमान है कि साम्राज्य का संगठन 'अर्थशास्त्र' में कौटिल्य द्वारा उल्लिखित विस्त त नौकरशाही के अनुरूप था। अत्याधुनिक नागरिक सेवा नगर की सफाई से लेकर अंतर्राष्ट्रीय व्यापार तक की प्रत्येक चीज को संचालित करती थी। अपने काल की विशाल स्थाई सेना होने के कारण साम्राज्य का विस्तार एवं सुरक्षा संभव हो पाई। मैगस्थनीज के अनुसार सेना में 6,00,000 पैदल 30,000 घुड़सवार और 9,000 जंगी हाथी शामिल थे। विशाल गुप्तचर प्रणाली आंतरिक एवं बाह्य सुरक्षा प्रयोजनों हेतु सूचना एकत्र करती थी। आक्रामक युद्ध और विस्तारवाद को छोड़ने के बाद भी अशोक ने साम्राज्य की सुरक्षा और संपूर्ण पश्चिम और दक्षिण एशिया में स्थिरता एवं शांति कायम करने के लिए इस विशाल सेना को कायम रखा।

30.8 मौर्य कालीन के बाद के राज्य

मौर्यकाल के बाद की राजनीति को मध्य एशिया के विजेताओं अर्थात भारत–यूनानियों, शासकों, पार्थियनों और कुषाणों के आगमन से रेखांकित किया गया। इन्होंने स्थानीय राजाओं पर अपनी हुकूमत जमाई, जिससे स्वामी और सेवक के संबंधों के

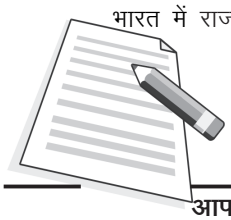

आपकी टिप्पणियाँ

आधार पर संगठन के विकास हेतु मार्ग प्रशस्त हुआ। मध्य एशियाई लोगों ने राजतंत्र के ईश्वरीय मूल वाली विचारधारा को मजबूत किया। कुषाण राजाओं ने स्वयं को भगवान की संतान बताया। मध्य एशियाइयों ने क्षत्रप प्रणाली और सैन्य आधिपत्य भी प्रारंभ किया।

पाठगत प्रश्न 30.2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दो :

1. अर्थशास्त्र किसने लिखा?

2. 7 वीं एवं 8वीं शताब्दी में कुमार नाम किसका द्योतक था?

3. मैगस्थनीज कौन था?

4. मौर्यकालीन युग की चार प्रांतीय राजधानियों के नाम बताओ।

5. मैगस्थनीज के अनुसार मौय साम्राज्य की सेना की संख्या कितनी थी?

30.9 गुप्तकालीन राज्य का विस्तार

चौथी शताब्दी ईसवी में विशाल साम्राज्य गुप्त साम्राज्य था, जो भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग का प्रारंभ था। यह साम्राज्य दो शताब्दियों से अधिक समय तक रहा। इसमें भारतीय उपमहाद्वीप का बड़ा भाग सम्मिलित था, परन्तु इसका प्रशासन मौर्यों से अधिक विकेन्द्रीक त किंतु शुंगों से अधिक केन्द्रीक त था। राजाओं का देवत्व सिद्धांत गुप्तकाल में और अधिक लोकप्रिय हो गया था। विकल्प के तौर पर अपने पड़ोस के छोटे–राज्यों से युद्ध या वैवाहिक संबंधों की स्थापना के कारण प्रत्येक राजा के साथ साम्राज्य की सीमाओं में घट–बढ़ होती रहती थी। गुप्त राज्य में उपमहाद्वीप के उत्तरार्ध और मध्य भाग सम्मिलित थे, हालांकि उसका मौर्यकालीन राज्य से कम विस्तार था। गुप्त काल को साम्राज्य युग भी कहा गया है, परन्तु उसमें साम्राज्य–प्रणाली का प्रशासनिक केन्द्रीकरण मौर्य–काल की तुलना में कम दिखाई देता है। मौर्य काल के विपरीत गुप्त शासकों में राजाओं का दास के रूप में सेवा करने की अनुमति देने की प्रक ति थी और उन्होंने प्रत्येक राज्य को एकल प्रशासनिक इकाई में संगठित नहीं किया। यह बाद के मुगल साम्राज्य के लिए मॉडल था तथा ब्रिटिश शासन मुगल प्रतिमानों पर निर्मित हुआ था।

गुप्त शासक अपेक्षाक त अज्ञात परिवार के थे, जो शायद मगध अथवा पूर्वी उत्तर प्रदेश से आया था। त तीय राजा चन्द्रगुप्त–I ने महाराजाधिराज की उपाधि धारण की। उसने लिच्छवि वंश की राजकुमारी से विवाह किया तथा यह समारोह एक सोने के सिक्कों की श ंखला में मनाया गया। कहा जाता है कि यदि गुप्त शासकों ने प्रयाग (आधुनिक इलाहाबाद, पूर्वी उत्तर प्रदेश) पर शासन किया होता तो, वे वैवाहिक संबंधों द्वारा मगध को अपने राज्य में मिला सकते थे। गुप्त काल 320 ई.पू. में प्रारंभ हुआ था। चन्द्रगुप्त ने अपने पुत्र समुद्रगुप्त को लगभग 330 ई. पू. में अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था जिसका उल्लेख इलाहाबाद के एक स्तंभ पर अंकित समुद्रगुप्त की एक लंबी प्रशस्ति में मिलता है। एक अज्ञात राजा कच के सिक्कों से पता चलता है कि सिंहासन के लिए अनेक दावेदार रहे होंगे। समुद्रगुप्त ने अलग–अलग दिशाओं में युद्ध किए और अनेक जीत हासिल की। जिनका इसने राज्य लौटाया, वे जो चाहते थे वह करने के इच्छुक थे। वे आर्यव्रत शासकों, विभिन्न वन–मुखियों, उत्तरी कुलीन तंत्रों और पूर्व के सीमांत राज्यों के अतिरिक्त नेपाल से संबंध रखते थे। समुद्रगुप्त के अधिकार क्षेत्र में लाए गए दूरस्थ क्षेत्रों को अधीनस्थ कहा जाता था। उनमें उत्तर–पश्चिम के 'राजाओं के राजा' शका, मुरूंड और सिंहल (श्रीलंका) सहित 'सभी द्वीपों' के निवासी सम्मिलित थे। ये सब इलाहबाद की प्रशस्ति में सूचीबद्ध किए गए हैं। गंगा घाटी और मध्य भारत सीधे प्रशासनिक नियंत्रण वाले क्षेत्र थे। समुद्रगुप्त का पुत्र चन्द्रगुप्त–II लगभग 380 ई. पू. में उसका उत्तराधिकारी बना, तथापि कुछ साक्ष्यों के अनुसार बीच में कोई रामगुप्त नामक राजा भी हुआ था। चन्द्रगुप्त–II का मुख्य युद्ध उज्जैन के शका शासकों के विरुद्ध था, जिसमें प्राप्त सफलता एक चांदी के सिक्कों की श ंखला में मनाई गई। उत्तरी दक्षिण से लगा गुप्त राज्य उस क्षेत्र के सातवाहनों के उत्तराधिकारी वाकाटक वंश से वैवाहिक संबंध स्थापित करके सुरक्षित था। यद्यपि चन्द्रगुप्त ने विक्रमादित्य (शौर्य पुत्र) की पदवी धारण की किंतु इसका शासनकाल सैन्य युद्धों के बजाय सांस्क तिक और बौद्धिक उपब्धि ियों से अधिक जुड़ा है। उसके समकालीन चीनी बौद्ध भिक्षु फाह्यान ने भारत की यात्रा की और अपनी छाप छोड़ी।

30.10 गुप्तकालीन राज्य का स्वरूप

चन्द्रगुप्त–I के शासनकाल से आगे के गुप्त शासकों ने महाराजाधिराज की पदवी धारण की और शिलालेखों से प्राप्त जानकारी के अनुसार *वे परमाराजधिराज,* राजराजाधिराज के रूप में जाने गए। इलाहाबाद के स्तंभ में समुद्रगुप्त को भूमि पर निवास करने वाला भगवान कहा गया है। ऐतिहासिक विवरणों में उसका कुबेर, इन्द्र आदि के रूप में उल्लेख किया गया है। इस काल में वंशानुगत उत्तराधिकार स्थापित किया गया, किंतु प्रत्यतः इस काल में सम्राट अपने उत्तराधिकारी चयन करता था। गुप्त शासकों द्वारा जीते गए अनेक राज्यों को स्वतंत्र रूप से कार्य करने दिया गया था। उन्हें जीतकर अपने अधीन रखा गया पर अपने साम्राज्य में सम्मिलित नहीं किया गया। ये (सेवक) जमींदार जैसे गुप्त शासकों को उपहार देते थे, परन्तु कई बार उनमें से कुछ अपने अभिलेखों में गुप्त शासकों का अपने अधिराज (अभिलेखों का नियंत्रक) के रूप में उल्लेख नहीं करते थे। गुप्तों के शासन काल में भी सातवाहनों के शासन–काल में प्रचलित भूमि–अनुदानों और गांवों के अनुदान की भी परंपरा जारी रही। इन अनुदान के साथ प्रशासनिक अधिकार भी संलग्न रहते थे, जिससे प्रशासनिक प्राधिकार का विकेन्द्रीकरण होता था। उप–भूदान के

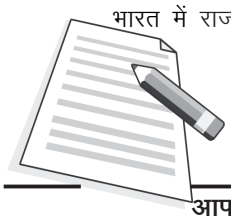

आपकी टिप्पणियाँ

(स्वामित्व) अधिकार भूदान लेने वाले (अनुदान प्राप्त करने वाले) को दिए गए। मध्य और पश्चिमी भारत में गांववालों को बेगार करनी पड़ती थी, जिसे विष्टि (बेगार श्रमिक) कहा जाता था और यह सभी वर्गों के लोगों पर लागू थी।

30.11 गुप्त कालीन प्रशासन

प्रशासन की द ष्टि से गुप्तकालीन राज्यों को प्रांतों में विभाजित किया गया था। वे देश अथवा भक्ति कहलाते थे और उन्हें छोटी–छोटी इकाईयों प्रदेश अथवा विषयों में बांटा गया था। इन प्रांतों पर कुमारमात्य राज्य करते थे जो उच्च राजसी (शाही) अधिकारी अथवा राज परिवार के सदस्य होते थे। नगरपालिका बोर्ड अधिष्ठान अधिकरण के गठन से प्रमाणित है, जिसमें शिल्पी संघ का अध्यक्ष (नगरश्रेष्ठिन), मुख्य व्यापारी (सार्थवाह) और शिल्पियों और मुंशियों के प्रतिनिधि सम्मिलित थे। इस अवधि में सामंत शब्द का उपयोग, जिसका मूल अर्थ है पड़ोसी, या तो मध्यस्थों के लिए होने लगा था, जिन्हें भूमि अनुदान दिया जाता था अथवा विजित हुए जमींदार शासकों के लिए होने लगा था। कुछ उच्च प्रशासनिक कार्यालयों को वंशानुगत बनाने की भी महत्त्वपूर्ण प्रव त्ति थी। जीते हुए क्षेत्रों पर कड़े नियंत्रण के अभाव में वे पुनः स्वतंत्र हो गए थे। बार–बार सैनिक कार्रवाई करने से राज्य के संसाधनों पर अधिक भार पड़ता था। गुप्त राजा स्थाई सेना रखते थे। सेना में घुड़सवार सेना और अश्व–धनुर्विद्या का उपयोग महत्त्वपूर्ण हो गया था। सीमा–क्षेत्रों की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया था। भूमि–भर और उत्पाद कर एकत्र किए जाते थे। न्याय–प्रणाली विकसित की गई और कानून संबंधी अनेक पुस्तकें लिखी गईं। पहली बार दीवानी और फौजदारी कानूनों में अंतर किया गया।

30.12 गुप्तकाल के बाद भारतीय राजनीति

हर्षवर्धन और पाल, प्रतिहार, राष्ट्रकूट और चालुक्य वंशों के उत्तराधिकारियों की शासन–प्रणाली वंशानुगत पद के राजा के व्यक्तित्व पर केन्द्रित थी। जागीरदारी प्रणाली अत्यधिक प्रचलित थी और राजाओं, उनके जागीरदारों के बीच बार–बार होने वाले युद्धों ने राजनीतिक स्थिति को अस्थिर बना दिया था। इन राज्यों में राजाओं द्वारा प्रत्यक्ष प्रशासन वाले क्षेत्र और जागीर–मुखियाओं के शासन वाले क्षेत्र सम्मिलित थे। इन्हें अपने आंतरिक कार्यों में स्वयं निर्णय लेने की स्वायत्तता थी। अपने अधिपति के प्रति निष्ठा रखना, उसे निर्धारित कर चुकाना और सेनाओं के कोटे की आपूर्ति करना जागीरदारों का सामान्य दायित्व था। सरकार 'सामंतवादी' होने लगी थी।

पाठगत प्रश्न 30.3

रिक्त स्थान भरिए :

1. चौथी शताब्दी में _____ महान शासक था।
2. तीसरे राजा _____ ने _____ की पदवी धारण की।
3. समुद्रगुप्त का उत्तराधिकारी _____ था।

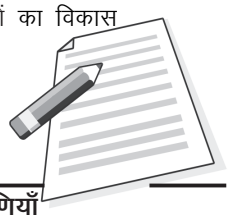

4. _____ का समकालीन फाह्यान एक _____ था, जिसने भारत की यात्रा की और अपनी छाप छोड़ी।

30.13 दक्षिण भारत में चोल राज्य

इस उपमहामद्वीप में चोल इस काल का कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण वंश था, यद्यपि उसकी गतिविधियाँ मुख्यतया प्रायद्वीप और दक्षिण पूर्व एशिया में चलती थीं। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में विजयालय के शासन के दौरान चोल शक्ति का केन्द्र तंजावुर था, जहाँ से चोल शासक दसवीं शताब्दी में पल्लव राज्य के शेष भागों को जोड़ते हुए उत्तर की ओर फैले। दक्षिण में उनका पांड्यों से सामना हुआ। चोल–इतिहास का बहुत विस्तार से पुनर्लेखन किया जा सकता है, क्योंकि न सिर्फ शाही परिवार ने बल्कि मंदिर प्राधिकारियों, ग्राम परिषदों और व्यापार–संघों ने बड़ी संख्या में लंबे अभिलेख जारी किए। परांतक–I (907–953) ने राज्य की नींव डाली थी। उत्तर में उसने नेल्लोर आंध्रप्रदेश तक अपने शासन का विस्तार किया जहां इसकी प्रगति राष्ट्रकूट राजा क ष्ण–III के हाथों हुई पराजय से बाधित हुई। परांतक दक्षिण में अधिक सफल हुआ था जहां इसने पांड्य और गंगा दोनों को पराजित किया। उसने श्रीलंका पर भी आक्रमण किया था, जो निष्फल रहा। उसकी म त्यु के 40 वर्षों तक अनेक परस्पर व्याप्त शासनों ने चोल की स्थिति को मजबूत नहीं होने दिया, तत्पश्चात दो श्रेष्ठ शासक हुए, जिन्होंने शीघ्रता से चोल शक्ति को पुनः स्थापित किया और राज्य को इसके शीर्ष पर पहुंचाया। ये थे राजराजा–I और राजेन्द्र।

राजराजा (985–1014) ने पांड्यों और तल मंडलम (श्री लंका) के विरुद्ध आक्रमण कर सत्ता स्थापित करनी प्रारंभ की। उत्तरी श्रीलंका चोल राज्य का प्रांत बन गया। गंग और चालुक्यों के विरुद्ध युद्ध से चोल राज्य की उत्तरी सीमा तुंगभद्रा नदी तक फैल गई। पूर्वी तट पर वेंगी पर आधिपत्य जमाने के लिए चोलों का चालुक्यों से युद्ध हुआ। एक वैवाहिक संबंध ने चोल शासकों को प्रामाणिक स्थिति प्रदान की, परन्तु वेंगी विवाद का विषय बनी रही। एक नौसेना युद्ध ने मालदीव द्वीप समूह, मालाबार तट और उत्तरी श्रीलंका पर विजय दिलवाई जो दक्षिणपूर्व एशिया और अरब तथा पूर्वी अफ्रीका के साथ व्यापार पर चोलों को नियंत्रण स्थापित करने के लिए अनिवार्य थे। ये अरब व्यापारियों और दक्षिण पूर्व एशिया तथा चीन की जोर जाने वाले जहाजों के लिए पारगमन क्षेत्र और आह्वान पत्तन थे, जो यूरोप को उच्च लाभ पर कीमती मसाले बेचने के स्रोत थे।

राजराजा–I के पुत्र राजेन्द्र ने अपने पिता की सत्ता में 1012 से भागीदारी की। दो वर्ष बाद उसका उत्तराधिकारी बना और 1044 तक शासन किया। उसने उत्तर में रायपुर दोआब को जोड़ा और चालुक्य राज्य के केन्द्र में मान्यखेत में प्रवेश किया। श्रीलंका के महिन्द–V के विरुद्ध विद्रोह से राजेन्द्र को दक्षिणी श्रीलंका पर भी विजय हासिल करने का बहाना मिल गया। 1021–22 में उसने प्रसिद्ध उत्तरी युद्ध प्रारंभ किया। चोल सेना ने पूर्वीतर तथा बंगाल के साथ और तत्पश्चात गंगा नदी के उत्तर में युद्ध किया जो लगभग चौथी शताब्दी ईसवीं में कांचीपुरम में समुद्रगुप्त के युद्ध के बिल्कुल विपरीत था। तथापि 1025 में दक्षिण पूर्व एशिया में विजय राज्य के विरुद्ध उसके द्वारा किया गया सबसे अधिक भयानक युद्ध था। श्रीविजय और पड़ोसी क्षेत्रों पर आक्रमण का कारण उनके द्वारा भारतीय जहाजराजी में हस्तक्षेप करना और दक्षिण चीन से सीधे व्यापारिक

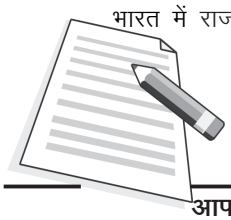

आपकी टिप्पणियाँ

संबंध स्थापित करने के लिए वाणिज्यिक हित थे। चोल शासकों की विजय ने इन स्थितियों को पुनः स्थापित किया तथा संपूर्ण ग्यारहवीं शताब्दी के दौरान चोल व्यापारी–प्रतिनिधिमंडलों ने चीन का दौरा किया।

30.14 चोल प्रशासन का विकास

साम्राज्य काल (850–1200) के दौरान चोल राज्य को इसकी अद्वितीयता एवं नवोन्मेषता के लिए जाना जाता था। चोल ऐसा पहला वंश था, जिसने समग्र दक्षिण भारत को एक सामान्य शासन के तहत लाने का प्रयास किया था और काफी हद तक अपने प्रयासों में सफल रहा। यद्यपि उस सरकार के नवाचारों की तुलना समकालीन सरकार के स्वरूप से नहीं की जा सकती तथापि चोल साम्राज्य का काल हमारे इतिहास में खुशहाली का युग था, जिसमें आदिम प्रतीत होने के बावजूद सरकार और लोगों द्वारा महान सफलताएं हासिल की गई थीं।

राजा सर्वोच्च सेनापति और हितैषी तानाशाह होता था। प्रशासन में उसकी भागीदारी में स्वयं को प्रस्तुत अभ्यावेदनों के संबंध में जिम्मेदार अधिकारियों को मौखिक आदेश देना सम्मिलित था। ऐसे आदेश अक्सर मंदिरों की दीवारों पर अत्यधिक विस्तार से अंकित किए थे। तिरुमंदिर ओलई नायगम नामक एक विशेष अधिकारी मौखिक आदेशों को तत्काल ताड़ के पत्तों की पांडुलिपियों पर दर्ज करते थे और उनकी यथातयता के लिए जिम्मेवार होते थे।

केन्द्रीय सरकार से संबंधित किसी मंत्रिपरिषद अथवा अन्य अधिकारियों को मौजूदगी के कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलते तथापि अलग–अलग मंत्रियों के नाम अभिलेखों में पाए जाते हैं। एक सशक्त नौकरशाही प्रशासन के कार्यों और राजा के आदेशों को निष्पादित करने में राजा की सहायता करती थी। आधुनिक अर्थ में विधान–परिषद अथवा विधायी प्रणाली की कमी के कारण राजा के आदेशों की निष्पक्षता उसकी अच्छाई और धर्म निष्पक्षता, एवं–न्याय बोधक में उसके विश्वास पर निर्भर थी। प्राचीन समाज सरकार से सामान्य सुरक्षा से ज्यादा कोई उम्मीद नहीं रखती थी। यहाँ तक कि विवादास्पद मामले न्यायालय के अधिकारियों के पास अंतिम उपाय के रूप में भेजे जाते थे। चोल नौकरशाही अपनी समकालीन नौकरशाहियों अर्थात् इस दौरान इसी से मेल खाती अन्य प्रचलित नौकरशाहियों से अधिक भिन्न नहीं थी। तथापि, इसकी अत्यधिक संगठित प्रक ति इसकी विशेषता थी। केन्द्रीय सरकार और स्थानीय निर्भरता के बीच एक सजगतापूर्ण संतुलन बनाए रखा गया था, तथा स्थानीय सरकार में अहस्तक्षेप अति महत्त्वपूर्ण था। नौकरशाही का एक निश्चित पदानुक्रम और कार्यकाल था 'राजा की खुशी' पर निर्भर होता था। अधिकारी मारयान और आदिगरिगल जैसी विभिन्न उपाधियां धारण करते थे। एक ही संवर्ग में वरिष्ठता पेरून्दनम और सिरुतानम जैसी उपाधियों द्वारा इंगित की जाती थीं। सरकार की आय एवं व्यय के लिए जिम्मेवार राजस्व अधिकारी महत्त्वपूर्ण अधिकारियों में से एक था।

प्रत्येक राज्य स्वयं शासित इकाई था। देश के विभिन्न भागों में ऐसे अनेक गांवों की संख्या से कुर्रम नाडू अथवा कोट्टम बनता था। तनिपूर अपने–आप में कुर्रम से काफी बड़ा गांव होता था। अनेक कुर्रमों से बेलनाडु बनता था। अनेक वेलनाडुओं से मंडलम यानी प्रांत बनता था। चोल साम्राज्य के चरमोत्कर्ष काल में उसके श्रीलंका सहित आठ अथवा नौ प्रांत थे। चोल के समग्रकाल में इनके लगातार विभाजन होते रहते थे और नाम

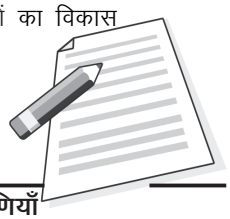

बदलते रहते थे उत्तामेरूर मंदिर में आठवीं शताब्दी के ई. पू. के अभिलेख में स्थानीय परिषद् के गठन, उम्मीदवारों की पात्रता एवं अनर्हताओं, चयन–पद्धति, उनके कार्यों और उनके अधिकारों की सीमा का उल्लेख है। ऐसा प्रतीत होता है कि सामान्य गांव डर अथवा ऊर का प्रशासन ब्राह्मणों को उपहार में दिए जाने वाले गांव से अलग होता था।

नौकरशाही के अधिकारियों की गतिविधियों की लगातार लेखा परीक्षा एवं समीक्षा की जाती थी। उत्तम चोल के शासन के एक अभिलेख में एक ऐसी रिपोर्ट का उदाहरण मिलता है जो हमें विशेष अनुदान के अभिलेखन के विलंब में कुछ अधिकारियों की लापरवाही एवं असावधानी की जानकारी देती है। फलतः विवादी पक्षों में विवाद हो गया कि इस अनुदान से किसको लाभ मिलना चाहिए। इसमें सम्मिलित अधिकारियों को दंडित किया गया। नागरिक प्रशासन का मुखिया होने के नाते राजा स्वयं कभी–कभी देश का दौरा करता और स्थानीय प्रशासन से पूछताछ करता था। चोला राजा कुलोत्तुंग द्वारा 1089 के लगभग एक व्यापक पुनर्सर्वेक्षण करवाया गया था, जिसमें भूमियों की सीमा और उनके कर निर्धारण गांवों की सीमाओं और गांव के भीतर सामान्य अधिकारों तथा सामुदायिक चरागाह का अभिलेखन किया गया था। राजस्व अधिकारी कर संग्रह के लिए उत्तरदायी थे। चोल सरकार राज्य तंत्र को चलाने के लिए उचित एवं यथार्थ संग्रह की आवश्यकता के प्रति अत्यधिक सतर्क थी। राजस्व–अभिलेख लूटखसोट की नियम पुस्तिका नहीं थे, भूमि–अधिकारों के सावधानी पूर्वक रखे गए अभिलेख थे जो यथार्थ सर्वेक्षणों पर आधारित पूर्ण जांच के माध्यम से अद्यतन रखे जाते थे। राजस्व अधिकारियों के कार्यों में अन्य क्षेत्रों की जिम्मेवारियां भी सम्मिलित थीं। ये मंदिरों की आय एवं व्ययों का भी निर्धारण करते थे। उन्हें गांव की ग्राम सभाओं की ओर से भूमि खरीदते हुए भी देखा जाता था। ग्राम परिषदों जैसी स्थानीय सरकारी एजेंसियों द्वारा तैयार किए गए महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों को स्थापित एवं प्रमाणित भी करते थे। उन्हें न्यायधीशों के रूप में कार्य करते हुए भी दिखाया गया था। केन्द्रीय सरकार द्वारा कर संग हीत करने के अतिरिक्त, अनेक स्थानीय निकायों को चुंगी और अन्य संगहीत करने का विशेषाधिकार प्राप्त था।

चोल साम्राज्य में न्याय अधिकतर स्थानीय मामला होता था, जहां छोटे–मोटे विवादों को ग्राम स्तर पर ही निपटा लिया जाता था। छोटे अपराधों के लिए सजाएं जुर्माने के रूप होती थीं अथवा दोषी को कुछ धर्म के लिए दान जैसे निकाय अथवा संस्थान को देने के लिए निदेश दिए जाते थे। नरहत्या अथवा कत्ल जैसे अपराधों के लिए भी जुर्माना द्वारा सजा दी जाती थी। राज्य के प्रति अपराधों जैसे देशद्रोह के बारे में राजा स्वयं सुनवाई करता और निर्णय लेता था तथा ऐसे मामलों में विशिष्ट सजा फांसी अथवा संपत्ति जब्त करना होती थी। प्रथम श्रेणी के कत्ल के मामलों में भी म त्युदंड असामान्य था। अब तक उपलब्ध सभी अभिलेखों में एकमात्र म त्युदंड का एक उदाहरण मिला है। ग्रामीण सभाएं स्थानीय विवादों के संबंध में निर्णय लेने में अत्यधिक शक्तियों का उपयोगी करती थीं। न्यायात्तार कहलाने वाली लघु समितियाँ उन मामलों की सुनवाई करती थी, जो स्वैच्छिक ग्रामीण समितियों के क्षेत्राधिकार में नहीं आते थे। ज्यादातर मामलों में सजा मंदिरों को दान अथवा अन्य दानव त्तियों के रूप में होती थीं। दोषी व्यक्ति को अपना जुर्माना धम्मासन नामक स्थान पर जमा कराना होता था। न्यायिक प्रक्रियाओं अथवा न्यायलय के अभिलेखों के बारे में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। दीवानी और फौजदारी मामलों

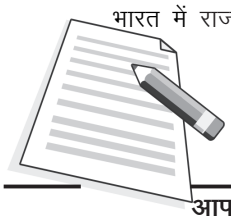

आपकी टिप्पणियाँ

में कोई अंतर नहीं था। कभी–कभी दीवानी विवादों को तब तक चलने दिया जाता था, जब तक समय उनका समाधान नहीं कर देता था। चोरी, मिलावट, धोखेबाजी जैसे अपराध संगीन अपराध माने जाते थे। अधिकतर मामलों में अपराधी को सजा के रूप में मंदिर में निरंतर दीया जलाना पड़ता था। कत्ल तक के लिए जुर्माना के रूप में सजा दी जाती थी। एक मामले में एक व्यक्ति सेना के एक कमांडर को एक व्यक्ति ने छुरा घोंप दिया था। राजेन्द्र चोल –II ने अपराधी को आदेश दिया कि वह पड़ोस के मंदिर में दीया जलाने के लिए 96 भेड़ें दान में दे।

पाठगत प्रश्न 30.4

सही उत्तर पर (सही) का निशान लगाएं

1. शताब्दी में विजयवाड़ा के शासन के दौरान चोल–शक्ति का केन्द्र तंजावूर था। (8 वीं, 9 वीं, 10 वीं)
2. राजाराजा–I के पुत्र राजेन्द्र ने _____ से अपने पिता की सरकार में भाग लिया। (1012, 1102, 2101)
3. उत्त्रामेरुर मंदिर में _____ शताब्दी ई. पू. के एक अभिलेख में स्थानीय परिषद् के गठन का उल्लेख है। (6वीं, 7वीं, 8वीं)

आपने क्या सीखा

प्रारंभ में मानव–समाज का मानना था कि सभी प्राणी समान है और सबको समान अधिकार देने चाहिए, क्योंकि मूलतः यह एक कबीलाई समाज था। वर्ग आधारित समाज का विकास राज–प्रणाली के परिवर्तन के लिए अनिवार्यता थी।

वैदिक राजतंत्रों में गोत्र–मुखिया राजा बने और धीरे–धीरे उन्हें ऐसा दर्जा प्रदान किया गया, जो भगवान के बराबर था। राज्य का अस्तित्व मुख्यतया दो घटकों पर निर्भर थाः दंड (प्राधिकारी) और धर्म। मौर्य साम्राज्य के आविर्भाव से राजतंत्र के राजनीतिक विचार को मजबूती मिली, मौर्यों के पतन के बाद किसी साम्राज्य के पुनः विकास में कई शताब्दियां लगीं।

कहा जाता है कि आर्यों ने भारत में लगभग 1500 ई. पू. प्रसिद्ध खैबर दर्रे से प्रवेश किया और भारतीय इतिहास में एक अन्य सभ्यता वैदिक काल का उदय हुआ। आर्य लोग कबीलों में बंट गए और प्रारंभ में उत्तर पश्चिमी भारत के विभिन्न प्रदेशों में बस गए। छोटे राजा की उपलिब्ध धारण करने वाले कबीले के मुखिया प्रारंभ में योद्धाओं से थोड़े बड़े होते थे और उनका मुख्य कार्य अपने कबीले की सुरक्षा करना था। राजा को दिए गए उपहारों में से बचे हुए उपहारों का पुनः उपयोग करने के लिए राजा आज्ञाकारिता की अपेक्षा करता था। महासंग्राम में कलिंग पर विजय प्राप्त करने के बाद अशोक महान ने

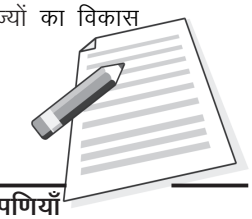

साम्राज्य का सैनिक विस्तार समाप्त कर दिया। मौर्य साम्राज्य शायद भारतीय उपमहाद्वीप पर शासन करने वाला महानतम साम्राज्य था। चन्द्रगुप्त के मंत्री कौटिल्य ने अर्थशास्त्र लिखा, जो अर्थशास्त्र, राजनीति, विदेश नीति, प्रशासन सेना, कला, युद्ध एवं धर्म का महान शोध–प्रबंध है, जैसा कभी नहीं लिखा गया था।

चौथी शताब्दी ईसवी में महान साम्राज्य गुप्त साम्राज्य था, जिसे भारतीय इतिहास का स्वर्ण युग कहा जाता था। यह साम्राज्य दो शताब्दियों से अधिक तक चला।

इस पाठ में आपने मौर्य कालीन नौकरशाही प्रणाली, गुप्तवंश के प्रशासन तथा चोल कालीन प्रशासन के विकास के बारे में भी जाना। नौकरशाही अथवा प्रशासन के अधिकारियों की गतिविधियों की लगातार लेखा परीक्षा और संवीक्षा होती थी। राजस्व अधिकारी कर–संग्रह के लिए जिम्मेवार थे।

पाठांत प्रश्न

1. राजस्व से क्या अभिप्राय है? राजत्व की विचारधारा का विकास कैसे हुआ?
2. महाजनपदों और राजतंत्रीय महाजनपदों में अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. मगध और मौर्यों के उदय का वर्ण कीजिए।
4. गुप्त कालीन राज्य का विस्तार कैसे हुआ?
5. चोल–प्रशासन के विकास का मूल्यांकन कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

30.1

1. प्रारंभ में मानव–समाज मुख्यतया कबीलाई समाज था।
2. मौर्य वंश के आविर्भाव से राजतंत्र की राजनैतिक विचारधारा को बल मिला।
3. सुद ढ़ राजनैतिक आधार के अभाव में आर्य कबीले आर्येतर लोगों के विरुद्ध संगठित होने में विफल रहे।
4. एक सभा में 7707 से भी अधिक राजा थे जो राज्यों के वर्ग का प्रतिनिधित्व करते थे।

30.2

1. कौटिल्य
2. शाही राजकुमार

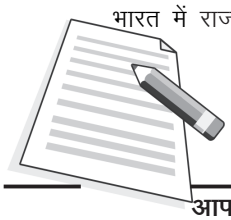

आपकी टिप्पणियाँ

3. एक ग्रीक दूत ने भारत का दौरा किया
4. (क) तोयसाली (ख) उज्जैन (ग) सुवर्णगिरि और (घ) तक्षशिला
5. 6,00,000, पैदल सेना; 30,000 घुड़ सवार और 9000 हाथी

30.3

1. गुप्त साम्राज्य
2. चन्द्रगुप्त–I, महाराजाधिराज
3. चन्द्रगुप्त–II
4. चीनी, बौद्ध

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. देखें अनुच्छेद 30.2 और 30.3
2. देखें अनुच्छेद 30.4
3. देखें अनुच्छेद 30.5
4. देखें अनुच्छेद 30.9
5. देखें अनुच्छेद 30.14